दूसरी नज़र

■ पी चिदंबरम

वोट के लिए घूस!

अगर सरकार आत्मविश्वास में रहती, तो अंतरिम बजट कोई बड़ा मौका नहीं था और उसे यों ही निकल जाने देती। लेकिन आत्मविश्वास एक खूबी है, जो भाजपा के नेतृत्व वाली एनडीए सरकार में नहीं दिखती। जरा भाजपा सांसदों के लटके हुए चेहरों पर ही नजर डाल लें, खासतौर से राजस्थान, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ और उत्तर प्रदेश के भाजपा सासंदों पर, तो आप मुझसे सहमत होंगे।

इसलिए प्रधानमंत्री मोदी ने फैसला किया कि अंतरिम बजट पेश करने के अवसर को एक खास आयोजन में बदल दिया जाए। कार्यवाहक वित्तमंत्री (उस खिलाड़ी की तरह जिसे पहली बार खेलने का मौका मिला) ने इस मौके को एक शानदार आयोजन बनाने की पूरी कोशिश की। इसके पीछे विचार यह था कि सरकार के इस आखिरी काम में जोश भर दिया जाए। दुर्भाग्य से इसका नतीजा उससे बहुत अलग देखने को मिल सकता है जो कि प्रधानमंत्री और अंतरिम वित्तमंत्री ने चाहा है।

अशोभनीय

वादों की हकीकत सामने आनी शुरू हो गई है।

सबसे पहले हम उस बड़े वादे पर गौर करते हैं जिसमें पीएम-किसान योजना के तहत दो हैक्टेयर या इससे कम जमीन वाले हर किसान को साल भर में छह हजार रुपए तीन किस्तों में देने का वादा किया गया है। सरकार ने इस योजना को एक दिसंबर, 2018 से प्रभावी करते हुए चुनाव आयोग की आंखों में धूल झोंकने की कोशिश की! ऐसा कैसे संभव हो सकता है? क्या सरकार किसान के बैंक खाते में पहली किस्त के दो हजार रुपए एक दिसंबर, 2018 से डालेगी और बैंकों को उस तारीख से ब्याज देने का निर्देश देगी? अगर यह रकम चुनाव आचार संहिता लागू होने के पहले जारी कर दी जाती है, तो ऐसे में चुनाव आयोग इस बारे में अपने को असहाय बता कर बच सकता है, और चुनाव आयोग अगर दूसरी किस्त नहीं रोकता है तो लोग यह नतीजा निकालेंगे कि एक और महत्त्वपूर्ण संस्था को दबा दिया गया या उस पर भी कब्जा कर लिया गया।

घूस

अब पीएम-किसान योजना की खूबियों को देखें।

हर सीमांत और छोटे किसान, जो दो हेक्टेयर या इससे कम की जमीन का मालिक है, को इस योजना में शामिल किया गया है। यह देश की कुल कृषि का 86.2 फीसद बैठता है। जो इसमें शामिल है वह तो महत्त्वपूर्ण है ही, जिसे इसमें शामिल नहीं किया गया वह भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है।

मालिक किसान, चाहे वह खेती कर रहा हो या नहीं कर रहा हो, या फिर बंटाई पर जमीन दे दी हो, इस योजना में शामिल है और उसे पैसा मिलेगा। बंटाई पर खेती करने वाला इसमें शामिल नहीं है, खेतिहर मजदूर को भी इस योजना में शामिल नहीं किया गया है, गैर-कृषि ग्रामीण गरीबों जैसे छोटे दुकानदारों, हॉकर, बढ़ई, सुनार, हज्जाम आदि भी इसमें शामिल नहीं है। शहरी गरीब तो इस योजना से पूरी तरह बाहर रखे गए हैं।

मालिक किसान के परिवार को सत्रह रुपए रोज मिलेंगे। मैं योजना का कोई मखौल नहीं उड़ा रहा हूं, यह तो सरकार है जो डीजल, बिजली, खाद, बीज आदि के दाम बढ़ा कर, खेती के उपकरणों जैसे ट्रैक्टर और फसल कटाई की मशीनों पर जीएसटी लगा कर और किसानों को उनकी फसल का उचित दाम न देकर उनके जले पर नमक छिड़क रही है।

क्या सत्रह रुपए रोजाना से किसी किसान-परिवार के कष्ट या गरीबी कम हो पाएगी? जाहिर है, नहीं। कई राज्यों में पांच सौ रुपए महीने (या छह हजार सालाना) की यह रकम वृद्धों या दिव्यांगों या विधवाओं को मिलने वाली पेंशन से भी कम होगी। यदि सत्रह रुपए या पहली किस्त के रूप में दो हजार रुपए गरीबी कम करने का पर्याप्त कदम नहीं है तो फिर यह है क्या? सीधी-सादी भाषा में यह वोटों के लिए दी जा रही नगदी है। सरकार चुनाव में वोट हासिल करने के लिए मतदाताओं को पैसा देगी, जैसा कि अवैध रूप से हासिल धन के उपयोग से कुछ राजनीतिक दल इस कला को आजमाते आए हैं। पीएम-किसान योजना के तहत मतदाताओं को घूस देने के लिए पहली बार सरकारी पैसे का इस्तेमाल किया जाएगा।

क्या राज्य सरकारों ने भूमि के मालिकाना हक संबंधी रेकार्डों को अद्यतन कर उनका मिलान कर लिया है? एक तरफ तो चार फरवरी को सरकार ने राज्यों को जमीनों के मालिकाना हक संबंधी रेकार्ड अद्यतन करने के बारे में लिखा, और उसी दिन दूसरी ओर सचिव ने यह घोषणा की कि पहली किस्त तत्काल जारी की जाएगी और सरकार दूसरी किस्त भी चुनाव के पहले जारी कर सकती है। लगता है सचिव सरकार के राजदार हैं!

शेखी

दूसरा बड़ा वादा पेंशन योजना का है, यानी पहली अटल पेंशन योजना के विफल होने के बाद दूसरी पेंशन योजना। पुरानी अंशदायी योजना मई, 2015 में शुरू की गई थी और दिसंबर, 2018 तक इसमें सिर्फ एक करोड़ तैंतीस लाख लोग ही पंजीकृत हो पाए। कुछ लोग थे जो इसके अंशदान के जटिल गणित को समझ गए थे, जिसमें निश्चित लाभ के साथ उपभोक्ता के अंशदान का पैसा मिलने की बात थी। नई योजना दिखने में तो आसान है, लेकिन इसमें हर महीने पचपन से सौ रुपए का अंशदान एक लंबे समय तक करना है जो इकतीस से बयालीस साल का होगा और जिसमें साठ साल की उम्र से तीन हजार रुपए मिलने शुरू होंगे। ऐसे में व्यावहारिक रूप से इसका कोई आर्थिक मतलब नहीं रह जाता। इसमें पंजीकरण कराने की अधिकतम आयु सीमा यदि पचास साल है (जैसा कि उनके भाषण से अनुमान लगा सकते हैं), तो कार्यवाहक वित्तमंत्री भी समझते हैं कि दस साल के लिए कोई इसमें पैसा नहीं देगा। मुझे लगता है कि दस करोड़ श्रमिकों और कामगारों के इसमें पंजीकरण कराने का जो प्रस्ताव है, उसकी कोई उम्मीद नहीं है, कार्यवाहक वित्तमंत्री ने इसके लिए पांच सौ करोड़ रुपए रखे हैं! (बजट भाषण के अनुच्छेद 37 से अलग बजट दस्तावेजों में इस आबंटन का उल्लेख कहां है?)

इसके अलावा और भी हवाई बाते हैं, जो खुले में शौच मुक्त जिले और गांव, हर घर को बिजली, मुफ्त एलपीजी कनेक्शन, रोजगार पैदा करने वाला मुद्रा लोन से जुड़ी हैं। बावजूद इसके तथ्य यह है कि इनमें से हर दावे को लेकर सरकार का पर्दाफाश हो चुका है। शिक्षाविदों, गैर-सरकारी संगठनों और पत्रकारों ने मौकों पर जाकर जो रिपोर्टें तैयार की हैं, उनसे झूठ सामने आ गया है।

कुल मिला कर अंतरिम बजट से यह उजागर होता है कि लोकसभा चुनाव के लिए भाजपा की रणनीति मतदाताओं को घूस देने और शेखी बघारने वाली है।

रवींद्रनाथ का शिक्षा दर्शन

जगमोहन सिंह राजपूत

रवींद्रनाथ टैगोर का बचपन उस समय के धनाढ्य घरों की परंपरा के अनुसार ही प्रारंभ हुआ। उनकी देखभाल सेवकों द्वारा अधिक की गई। बाद में उन्होंने स्वयं उस समय को परिवार के 'सेवकों' के निरंकुश शासन के रूप में वर्णित किया। उनके ऊपर जो बंधन लगाए गए, उनमें उन्हें घर कैद-सा लगा। बच्चों को प्राकृतिक सौंदर्य का अवलोकन कर उसका आनंद लेने से रोकना उन्हें अपार मानसिक कष्ट देता रहा। वे घर के बंधनों से बाहर आना चाहते थे। उन्होंने स्कूल जाने की उत्सुकता स्वयं व्यक्त की, परिवार का दबाव नहीं था। मगर जब गए तो उन्होंने वहां भी हर तरफ बंधन ही देखे, लगभग वैसे ही जैसे उन्हें घर की चारदीवारी में मिले थे। वहां के ऐसे अनुभव के बाद वे स्कूल के बंधन से छूटने को व्याकुल हो गए। जेल की तरह की दीवारें, निर्मम अनुशासन और सजा। अध्यापक उन्हें 'बेंत की प्रतिमूर्ति' ही दिखाई देता था। असहनीय परिस्थितियों में अपरिचित भाषा में दी जा रही शुष्क तथा नीरस शिक्षा शुरू से ही नियमों, सिद्धांतों, तथ्यों, संकल्पनाओं को रटाने पर निर्भर थी। इसमें जो सिखाया जाता था उस पर विचार करने या उसे समझ कर आत्मसात करने की कोई संभावना ही नहीं बनती थी।

'शिक्षार हेरफेर' लेख में टैगोर ने लिखा था कि सोचने की शक्ति और कल्पना शक्ति दो ऐसी अत्यंत महत्त्वपूर्ण मानसिक शक्तियां हैं, जिनसे मनुष्य की क्षमताएं लगातर बढ़ती रहनी चाहिए। यह एक कार्यशील और सर्जनात्मक जीवन के आवश्यक अंग हैं, उसमें नवाचार और नवोन्मेष लाने के कारक हैं। बचपन से ही विचार तथा कल्पना की शक्ति को प्रस्फुटित करने का प्रयास अनिवार्य रूप से होना चाहिए। दुर्भाग्य से रटाने पर इतना जोर दिया जाता रहा है कि स्कूलों में कि ये दोनों लगातार कुंद होते जाते हैं। जैसे ही इन पर ध्यान देना प्रारंभ होगा, तो दो अन्य अत्यावश्यक तत्व स्वतः उभरेंगे- जिज्ञासा और सर्जनात्मकता। यह तभी संभव है जब बच्चों पर अनावश्यक नियंत्रण नहीं थोपा जाएगा।

शिक्षा

> गुरुदेव मानते थे कि प्रकृति और ललित कलाओं से संपर्क का बालक की भावनाओं पर जो प्रभाव पड़ता है वह उसे मानवीय मूल्यों को आत्मसात करने में सहायक होगा। वह उसके संपूर्ण व्यक्तित्व विकास के लिए भी आवश्यक है।

गुरुदेव हर अवसर पर किताबी शिक्षा के प्रति अपनी दूरी को अवश्य प्रगट करते थे। वे प्रकृति से सीधे सीखने की क्षमता को प्रोत्साहन देने के पक्षधर थे। अध्यापकों के प्रयास बच्चों को जीवन की वास्तविकता और अपने आसपास के पर्यावरण से परिचित कराने की दिशा में ही केंद्रित होने चाहिए। हमारी शिक्षा कुछ ऐसी है जैसे पेड़ की जड़ों से सैकड़ों गज दूर वर्षा हो और उसमें से कुछ बूंदें ही बड़ी मुश्किल से जड़ों तक; यानी हमें अपने जीवन संवारने के लिए मिल सकें! हमारे सामने यक्ष प्रश्न शिक्षा और जीवन के बीच समरसता- हारमनी- स्थापित करने का है।

कृष्ण कृपलानी की पुस्तक 'रवींद्रनाथ ठाकुर एक जीवनी' में यह पक्ष बड़े ही प्रभावशाली ढंग से उभरता है: 'उनका मानना था कि बालक का मस्तिष्क अपने परिवेश के प्रति असाधारण रूप से सजग होता है और वह उसे ऐंद्रिक अनुभवों द्वारा ग्रहण करता है। अपने मस्तिष्क से सीखने के पूर्व वह इन अनुभवों को इंद्रियों से आत्मसात करना सीख चुका होता है। इसलिए उसे एक ऐसा वातावरण प्रदान किया जाना चाहिए, जो उसकी जिज्ञासा को उत्प्रेरित करे, ताकि उसे अपने चारों ओर की दुनिया सहज और आनंदपूर्ण लगे। उसे इस बात के लिए भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वह अपना काम स्वयं करे और जहां तक संभव हो शिक्षक पर उसकी निर्भरता कम हो। इसलिए जहां तक हो सके उसे कला का शिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए, ताकि बालक अपने वातावरण को समझ सके और उससे प्यार कर सके।

रवींद्रनाथ के अनुसार, प्रकृति ही सर्वश्रेष्ठ शिक्षक है। वे कला से प्रारंभ करने की बात करते थे, गांधी 'क्राफ्ट' की बात करते थे। बुनियादी तालीम में जो हाथ से काम सीखने को बात थी, उस पर गुरुदेव के यहां भी जोर दिया जाता था कि बालक अपने हर अंग-प्रत्यंग के कार्य और उनकी संवेदना को समझ ले। इस सारे चिंतन और शैक्षिक दर्शन के विपरीत शिक्षा के नाम पर जो तब हो रहा था- और आज भी हो रहा है- उस पर गुरुदेव का कथन था: 'हमारे देश की शैक्षिक संस्थाएं मात्र ज्ञान का भिक्षापात्र हैं और ये हमारे राष्ट्रीय आत्मसम्मान का सिर नीचा करती हैं और हमें इस बात के लिए उत्साहित करती हैं कि हम उधार लिए पंखों का आडंबरपूर्ण प्रदर्शन कर सकें।' इस सबके परिणाम के संबंध में वे आगाह भी करते हैं- 'अगर सारी दुनिया आगे बढ़ते-बढ़ते अतिरंजित पश्चिम की तरह ही हो जाय तो फिर ऐसी फूहड़ नकल वाले आधुनिक युग की छद्मता अपने आप समाप्त हो जाएगी, वह अपनी ही विमूढ़ता के नीचे दम तोड़ देगी।'

टैगोर और गांधी पश्चिम के ज्ञान-विज्ञान के प्रशंसक थे, मगर दोनों भारत की विशेषता और विशेषज्ञता को नजरंदाज करने को तैयार नहीं थे। गुरुदेव के अनुसार हमें अपने नैतिक ज्ञान भंडार को किसी भी सूरत में भूलना नहीं चाहिए, क्योंकि यह पश्चिम के उस ज्ञान से कहीं उच्च स्तर का तथा प्रभावशाली है, जिसमें केवल अनगिनत उत्पाद तथा भौतिकता लगातार संघर्षरत हैं। गुरुदेव ने स्पष्ट लिखा कि हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि आधुनिक विज्ञान मानवता को सदा के लिए यूरोप का दिया एक वरदान है। हमें उसे उपयोग में लाना चाहिए और पिछड़े बने रहने से मुक्ति पानी चाहिए, मगर उसे उसी स्वरूप में बिना विश्लेषण के स्वीकार नहीं किया जा सकता है। इसका सबसे सटीक उदाहरण है यूरोप की शिक्षा प्रणाली का वैसे का वैसा ही भारत में लागू कर लेना। शिक्षा का जो अनुपयुक्त और अव्यावहारिक स्वरूप भारत पर थोपा गया था, उससे उनका (और गांधी का भी) विरोध पूर्ण था। उससे बचने के लिए आवश्यक था कि भारत की संस्कृति के हर पक्ष को संबल देकर शिक्षा में उभारा जाए, न कि पश्चिम की संस्कृति के विरोध में राष्ट्रीय ऊर्जा को खपाया जाए।

गुरुदेव मानते थे कि मनुष्य की वैचारिकता के बृहद और विस्तृत अध्ययन द्वारा भारतीय जीवन में 'विविधता में निहित सामंजस्य तथा तालमेल' को समझा जा सकता है। गुरुदेव सदा ही खुलेपन और नैसर्गिक तथा आनंदपूर्ण वातावरण की ओर इंगित करते रहे, जिसे पाना बच्चों का नैसगिक अधिकार माना जाना चाहिए। गुरुदेव का सारा शैक्षिक दर्शन प्रकृति को सर्वश्रेष्ठ शिक्षक मानता रहा। उसे ही व्यावहारिक रूप में शांति निकेतन परिसर में सभी के समक्ष रखा गया। मनुष्य की नियति है कि वह प्रकृति की सदा बदलती रहती मनोदशाओं को जानने-समझने का प्रयास करे। अगर वह ऐसा पूर्ण मनोयोग से करेगा, तो उसका प्रकृति से मानसिक और संवेदनात्मक संबंध स्थापित हो हो जाएगा। चूंकि स्कूल-आधारित शिक्षा व्यवस्थाएं ऐसा नहीं कर पाई हैं, इसलिए मनुष्य और प्रकृति के बीच की संवेदनात्मक कड़ी कमजोर हो गई और मनुष्य प्रकृति को केवल संसाधनों के दोहन और संग्रहण में ही उलझ कर रह गया। परिणाम सामने है: जलवायु परिवर्तन, वायु-प्रदूषण, जल संकट और कितने ही अन्य। विज्ञान बढ़ा है, ज्ञान बढ़ा है, मगर विवेक नहीं बढ़ा है। परिणाम स्वरूप मानवता नहीं बढ़ी है।

गुरुदेव मानते थे कि प्रकृति और ललित कलाओं से संपर्क का बालक की भावनाओं पर जो प्रभाव पड़ता है वह उसे मानवीय मूल्यों को आत्मसात करने में सहायक होगा। वह उसके संपूर्ण व्यक्तित्व विकास के लिए भी आवश्यक है। इनमें जो भी रुचि लेगा उसकी जिज्ञासा और प्रखर होगी तथा इससे उसकी सर्जनात्मकता को भी संबल मिलेगा। इसके लिए ऐसी शिक्षा व्यवस्था को साकार रूप देना होगा, जिसकी जड़ें देश की मिट्टी, यानी संस्कृति, विरासत, इतिहास और ज्ञानार्जन परंपरा में गहराई तक गई हुई होनी चाहिए। आज के नीति निर्धारकों के समक्ष यही चुनौती है।

गलतियां बनाम उपलब्धियां

वक़्त की नब्ज़

■ तवलीन सिंह

नरेंद्र मोदी ने पिछले हफ्ते लोकसभा में अपने कार्यकाल का आखिरी भाषण दिया। काश कि इस भाषण में उन्होंने अपनी बातें ज्यादा की होतीं और कांग्रेस की कम। इतिहास के पन्ने पलट कर उन्होंने इंदिरा गांधी की गलतियां खोज कर पेश कीं। याद दिलाया कि पचास बार उनके दौर में राज्य सरकारों को बर्खास्त किया गया था, इमरजेंसी लगी थी, न्यायालयों की स्वतंत्रता को समाप्त कर दिया गया था। और आप मुझ पर आरोप लगाते हैं संस्थाओं को समाप्त करने का?

जनता बड़ी जालिम है मोदीजी। इतिहास में कम रुचि रखती है, वर्तमान में बहुत ज्यादा। सो, अच्छा होता अगर आपने अपने इस अति-महत्त्वपूर्ण भाषण में सिर्फ अपने कार्यकाल की बातें की होतीं। हां, आपने अपनी कई उपलब्धियां गिनाईं तो थीं, लेकिन इनमें आपने नोटबंदी का जिक्र तक नहीं किया। क्या इसलिए कि आप भी जान गए हैं अब कि यह शायद आपके इस कार्यकाल की सबसे बड़ी गलती साबित होगी? नोटबंदी तक आपसे जनता ने पूरी उम्मीद रखी थी कि आप आर्थिक मामलों के इतने बड़े जादूगर हैं कि रोजगार की बहार लेकर आएंगे। नोटबंदी क्या की आपने कि रोजगार के करोड़ों अवसर तबाह हो गए और कई छोटे कारोबार हमेशा के लिए बंद हो गए।

नोटबंदी को आपने खुद कड़वी दवा कहा, लेकिन कड़वी दवा खाने का फायदा आज तक नहीं दिखा है भारत की अर्थव्यवस्था में, सो जिस रोजगार की उम्मीद से नौजवान भारतीयों ने आपका साथ दिया, वे रोजगार के नए अवसर आज तक नहीं पैदा हुए हैं। उलटा हाल में आए आंकड़ों के मुताबिक बेरोजगारी जिस हद तक आज है देश में, उस तरह की बेरोजगारी दशकों बाद दिखी है। सो, आपको हरा सकता है अगर कोई एक कारण, तो वह बेरोजगारी हो सकता है, 'महामिलावट' वाला गठबंधन नहीं। सही नाम दिया है इस गठबंधन को आपने, क्योंकि वास्तव में इस गठबंधन के बनने के पीछे देशसेवा की भावना नहीं है और न ही इसको संगठित करती है कोई महान विचारधारा। संगठन का कारण एक ही है और वह है मोदी।

इस बात को खुल कर कहते भी हैं इस गठबंधन के सरदार। बस मोदी को हराना है। उसके बाद कर लेंगे बातें देशसेवा की। न उनका यह मकसद नेक है और न ही इस गठबंधन का चरित्र। इसमें ज्यादातर नेता वे हैं, जो राजनीति में आए हैं मम्मी-पापा के आशीर्वाद से, जनता की सेवा के लिए नहीं। वे ऐसे लोग हैं जिन पर गंभीर आरोप हैं भ्रष्टाचार के। मगर वर्तमान उपलब्धि उनकी यही है कि मोदी की गलतियों का फायदा उठा कर उन्होंने आने वाले चुनाव के सूत्रधार की भूमिका छीन ली है मोदी के हाथों से।

> जितना विश्लेषण मोदी के इस कार्यकाल का किया गया है, शायद ही किसी पूर्व प्रधानमंत्री का किया होगा राजनीतिक पंडितों ने। और हर तरह से जो बात सामने आती है वह यह कि मोदी ने ईमानदारी से किया है काम और देश को आगे ले जाने की भावना से किया है।

इतना विश्वास है इस गठबंधन के नेताओं को अपनी जीत पर कि प्रधानमंत्री पद की भी गरिमा भूल गए हैं। सो, पिछले सप्ताह राहुल गांधी ने मोदी को डरपोक कहा। इससे पहले कई महीनों से उनको 'चोर' कहते आए हैं, जैसे साबित हो गया हो कि मोदी ने रफाल सौदे में चोरी की है। आरोप खूब लगे हैं इस सौदे को लेकर, हल्ला भी खूब मचा है, लेकिन अभी तक ठोस सबूत पेश नहीं किए हैं किसी ने कि इस सौदे में वास्तव में चोरी की गई है। पर चुनावों का मौसम है, सो कुछ भी चलता है।

मोदी के कार्यकाल में अगर गलतियां हुई हैं, तो अच्छे काम भी बहुत हुए हैं। मेरी नजर में सबसे अच्छा काम स्वच्छ भारत के तहत हुआ है। जहां कभी भारत के देहातों में खुले में शौच करते थे तकरीबन साठ प्रतिशत लोग, अब इतना परिवर्तन आ गया है कि माना जाता है तकरीबन अट्ठानबे प्रतिशत ग्रामीण जिले ऐसे हैं, जहां इस बीमारी फैलाने वाली गंदी आदत से मुक्ति मिल चुकी है। ग्रामीण भारत में परिवर्तन और भी आए हैं। दूरदराज गांव में भी अब गैस के कनेक्शन पहुंच चुके हैं, कच्ची बस्तियां कम हुई हैं और डिजिटल शब्द अब आम भाषा में आ गया है। माना कि डिजिटल से थोड़ी-बहुत तकलीफ हुई है उन ग्रामीणों को, जिनके गांव बहुत दूर हैं बैंकों से, लेकिन भविष्य में वे भी शायद जान जाएंगे डिजिटल दुनिया में आने के लाभ।

सो, हिसाब जब लगाएंगे इतिहासकार, मुझे यकीन है कि मोदी के इस कार्यकाल की गलतियों से ज्यादा गिनने को मिलेंगी उपलब्धियां। जितना विश्लेषण मोदी के इस कार्यकाल का किया गया है, शायद ही किसी पूर्व प्रधानमंत्री का किया होगा राजनीतिक पंडितों ने। और हर तरह से जो बात सामने आती है वह यह कि मोदी ने ईमानदारी से किया है काम और देश को आगे ले जाने की भावना से किया है। सो, जब उनकी तुलना की जाती है 'महामिलावट' के उस गठबंधन से, तो मोदी का कद उन सारे नेताओं से ऊंचा दिखता है। सर्वेक्षण भी बताते हैं कि अधिकतर लोग अब भी मोदी को प्रधानमंत्री बनने के सबसे काबिल समझते हैं।

दूसरे नंबर पर हैं राहुल गांधी, जो अभी से इतना इतरा के चलने लगे हैं कि राजनीति की मर्यादा भी भूल गए हैं। भूल गए हैं कि देश के प्रधानमंत्री की बात जब करते हैं तो उनको 'डरपोक' और 'चोर' कहना न सिर्फ गलत है, बदतमीजी है। राहुल गांधी राजनीति में नए नहीं हैं अब। एक दशक हो गया है उन्हें, जिसमें उन्होंने ज्यादातर चुनाव हारे हैं और काबिलियत भी कम दिखाई है। इसके बावजूद ऐसे पेश आ रहे हैं आजकल जैसे बन चुके हैं भारत के प्रधानमंत्री। भूल गए हैं शायद कि जिस महगठबंधन में वे शामिल हैं, उसमें प्रधानमंत्री बनने के दावेदार बहुत हैं। इन सबको खड़ा कर दिया जाए मोदी के सामने, तो मोदी की गलतियां भूल कर उनकी सिर्फ उपलब्धियां याद रहती हैं।

हिंदी की टांग तोड़ते हुए

हम सड़क छाप हैं, गली छाप हैं।

एक चैनल पर एक बंधु इसी पर फैल गए कि ये सड़क छाप तो आम आदमी ही है, आप उसकी खिल्ली उड़ाने वाले कौन हैं?

बहस में शामिल सब इतने उत्तेजित होते हैं कि यह भी भूल जाते हैं कि मुद्दा बहस के शिष्टाचार का था, शिष्ट भाषा की बात थी, नागरिक शिष्टाचार की दरकार थी और इसीलिए सड़क छाप भाषा का आरोप लगाया गया!

लेकिन इस अशिष्ट भाषा को सुनने के हम न जाने कब से आदी हो चले हैं कि अगर किसी बहस में यह भाषा न सुनाई दे, तो लगता है कि गलत चैनल लग गया है।

दिन में संसद से सड़क तक कुछ हो, शाम को जब दस विचारक बैठते हैं तो घटिया से घटिया स्तर पर आकर बहस करने लगते हैं। एंकर भी यही चाहते होते हैं। जब तक कोई किसी को दो-चार मोटी-मोटी गाली न दे ले, झूठा, मक्कार, चोर, उचक्का, भ्रष्ट-महाभ्रष्ट न कह ले, तब तक बहस 'उठती' ही नहीं।

जब तक किसी बहस में दो-चार झपटने वाले न हों, गाली देने वाले न हों, तब तक बहस का 'पीक टाइम' नहीं आता। आरोप लगा और भूल जा! गाली दे और भूल जा!एंकर फिर बुलएंगे, क्योंकि तेरी गालियां ही उसको रोटी-रोजी देती हैं!

इस दिनों का सबसे अधिक बोला जाने वाला शब्द है 'चोर'!

'चौकीदार चोर है।' 'चोर चौकीदार से डरते हैं'। ऐसे जुमले में बहुत कुछ मजाहिया है, लेकिन हमारी फूहड़ बहसें एक मस्त मजाक तक पैदा नहीं कर पातीं।

इस बीच कोलकाता वाला धरना ड्रामा निपट चुका था! कोलकाता के ड्रामे ने साफ कर दिया कि ममता से पार पाना केंद्र सरकार के लिए फिलहाल टेढ़ी खीर है!

सीबीआइ टीम की जैसी किरकिरी कोलकाता की सरकार और पुलिस ने की, वह अभूतपूर्व थी। कोलकाता के बड़े पुलिस अफसर को 'पकड़ने' गए सीबीआइ वालों को जिस तरह से कोलकाता पुलिस ने हिरासत में लिया और जवाबी हमले में ममता खुद तुरंत धरने पर बैठ गईं, वह देखते बनता था। देर तक यह सब न केंद्र की समझ में आया, न सीबीआइ की समझ में आया, न एंकरों की समझ में आया कि ये क्या हो रहा है? ममता एक बार फिर अपने 'स्ट्रीट फाइटर' के अवतार में सामने आईं। उनके इस छिन्नमस्ता रूप ने सीबीआइ का सारा रुतबा हवा कर दिया।

भाजपा प्रवक्ता रोते रहे कि देखो देखो कानून की धज्जियां उड़ रही हैं। देखिए संविधान तोड़ा जा रहा है। सीबीआइ को पुलिस ने हिरासत में ले लिया है। धक्का-मुक्की हुई है और ममता पुलिस का हौसला बढ़ा रही हैं।... ऐसे कैसे चलेगा?

सीन में गरमी बढ़ती रही। गृहमंत्री ने फोन कर बात की कि क्या हो रहा है कि ममता ने पारा ऊपर चढ़ाया और कह दिया कि संविधान की रक्षा में वही धरने पर बैठेंगी। संविधान खतरे में है और सरकार भी वहीं से चलेगी और लीजिए कैबिनेट की मीटिंग वहीं और बजट की फाइल वहीं ओके, और क्या चाहिए?

ममता के इस प्रतिरोध ने उनके अब तक के सारे 'क्रिटीक' धो डाले। इसके बाद एंकर लगे रहे कि वे पीएम की अपनी दावेदारी बढ़ाने के लिए यह शो कर रही हैं।...

एक निहायत गैर-हमदर्द मीडिया तक ममता का कुछ न कर सका। उनके नारे सामने थे: 'दो हजार उन्नीस बीजेपी फिनिश'!

पीएम के संसदीय प्रतिउत्तर के बाद के सन्नाटे में अचानक राहुल ने एक त्वरित प्रेस कान्फ्रेंस करके राफेल मुद्दे को एक बार फिर ताजा कर दिया। राहुल जब भी प्रेस कान्फ्रेंस में आते हैं, तो कुछ चुटकी लेते हुए आते हैं। इस बार उनके पास 'द हिंदू' में छपा पत्र था, जिसमें रक्षा मंत्रालय द्वारा राफेल डील में पीएमओ के 'समांतर हस्तक्षेप' करने पर आपत्ति किए जाने की खबर थी। राहुल आए। पत्र पढ़ा और खेल खत्म, कि सिद्ध है कि 'चौकीदार चोर है' 'ये मैं नहीं बोल रहा हूं ये लेटर बोल रहा है। आप पढ़ लें और उनसे इसका जवाब मांगें।... आप वाड्रा या चिदंबरम या जो भी हों, उनकी जांच कराएं, लेकिन राफेल के इस पत्र की जांच भी तो करें!

उक्त 'पत्र' के आरोप का जवाब देने की जगह भाजपा के प्रवक्ता राहुल को लथेड़ते रहे कि उनका मानिसक संतलुन ठीक नहीं, कि वे प्रलाप करते हैं, कि भ्रष्ट हैं, कि स्वयं बेल पर हैं। लेकिन जब एंकर ने पूछा कि हिंदू में छपे पत्र का जवाब क्या है? तो कहीं जवाब नहीं आया! हां, तू तू मैं मैं जारी रही। संसद में शोर रहा, सब तरफ चोर चोर का शोर रहा! संसद में बहस जारी रही।

बहरहाल, एक नामी अंग्रेजी चैनल 'हिंदी हो जाए' कहते-कहते हिंदी में आ चुका है। मुखिया एंकर अंग्रेजी वाले ही हैं। एक बहस में वे बोलने लगे कि मैं 'मुद्दे' को 'परिप्रेक्ष्य' में रख रहा हूं। फिर बोलते-बोलते बोले कि मैं उसकी 'धरोहर' बना रहा हूं!

दिमाग अंग्रेजी वाला और काम करना पड़े हिंदी में तो यही दुर्गत होती है। सर जी हिंदी की ऐसे टांग न तोड़ें! उस पर कुछ रहम करें। उसे 'घर की मुर्गी दाल बराबर' न समझें। उसे भी सीखना होता है। सीखने में शर्म कैसी? जग हंसाई से बचना है तो हिंदी का कोई 'क्रैशकोर्स' ही कर लें!

और कांग्रेस को चाहिए कि अपने थरूर साहब के 'हिंदी-बोध' को भी 'दुरुस्त' करा लें!

बाखबर

■ सुधीश पचौरी

> सीबीआइ टीम की जैसी किरकिरी कोलकाता की सरकार और पुलिस ने की, वह अभूतपूर्व थी। कोलकाता के बड़े पुलिस अफसर को 'पकड़ने' गए सीबीआइ वालों को जिस तरह से कोलकाता पुलिस ने हिरासत में लिया और जवाबी हमले में ममता खुद तुरंत धरने पर बैठ गईं, वह देखते बनता था।